International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
ISSN -2393-8048, January-June 2021, Submitted in June 2021, iajesm2014@gmail.com

अमरकान्त के उपन्यासों में भ्रष्ट राजनीति और भ्रष्ट नौकरशाही

किरण, शोधार्थी, हिन्दी विभाग, सनराइज विश्वविद्यालय, अलवर
डॉ० मीनेश जैन, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, सनराइज विश्वविद्यालय, अलवर, राजस्थान

शोध–सार

किसी भी देश की शासन–व्यवस्था को सुव्यस्थित तथा सुचारू ढंग से चलाने के लिए विशेष नीतियाँ निर्धारित की जाती है, वे विशेष नीतियाँ ही उस देश की राजनीति का पर्याय बन जाती है। प्रत्येक देश की राजनीति उस देश की आर्थिक, सामाजिक, नैतिक तथा सांस्कृतिक स्थिति का दर्पण होती है। देश के उत्थान–पतन, भूत–भविष्य तथा वर्तमान का अनुभव देश की राजनीति से लगाया जा सकता है। यह बात निर्विवाद सत्य है कि शासक और शासन–व्यवस्था दोनों का प्रभाव समाज पर निश्चित रूप से पड़ता है। जिस देश अथवा प्रदेश का शासक भ्रष्ट होता है, वहाँ की जनता भी भ्रष्ट हो जाती है। जिस प्रकार परिवार के मुखिया के व्यवहार का प्रभाव अन्य सदस्यों पर पड़ता है, वैसे ही राजनीति में शासन का प्रभाव समाज पर पड़ता है। सुव्यवस्थित प्रशासन के अभाव में हमारा सामाजिक जीवन उच्छृंखल हो जाता है, जैसे कि हमारा व्यक्तिगत जीवन पारिवारिक अनुशासन के अभाव में भ्रष्ट हो जाता है। अतः समाज को व्यवस्थित रखने के लिए स्वच्छ प्रशासन अनिवार्य है।

मुख्य शब्द – भ्रष्टाचार, राजनीति, आम आदमी, सामाजिक जीवन, प्रशासनिक अधिकारी

आम आदमी के अधिकार मात्र कागजी बातें रह गई हैं। भारतीय प्रजातन्त्र मे आम आदमी की कोई सुनवाई नहीं। यहाँ राजे–महाराजे और उनके युवराजों का दबदबा है। वे जैसा चाहते हैं सरकार वैसा ही करती है। आम आदमी को आज भी उनके दरबार में झुकना पड़ता है। आज भी इन लोगों के सुख–सुविधा और ठाट–बाट में कोई अन्तर नहीं आया। जबकि आम आदमी गरीबी तथा अभावग्रस्त जीवन व्यतीत करता है।

'नौकरशाही' शब्द अंग्रेजी भाषा के 'ब्यूरोक्रेसी' का हिन्दी रूपान्तरण है। यह फ्रांसिसी भाषा के शब्द 'ब्यूरो' से बना है। इसका अर्थ लिखने की मेज या डैस्क है। इस शब्द का सीधा अर्थ हुआ 'डैस्क सरकार'। ''आधुनिक युग में राज्य का स्वरूप कल्याणकारी होने के कारण प्रत्येक राज्य के कार्यों में अत्यन्त वृद्धि हुई है। जब राज्य के कार्य बहुत सीमित होते थे उस समय भी शासन के कार्यों को असैनिक अधिकारियों द्वारा ही चलाया जाता था। आधुनिक युग में इन असैनिक अधिकारियों की महत्ता और भी अधिक बढ़ गई है एवं यह कहना अनुचित न होगा कि स्थायी असैनिक अधिकारियों के बिना कोई भी सरकार कुशलतापूर्ण अपने उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर सकती। इन असैनिक अधिकारियों अथवा प्रशासकीय अधिकारियों के लिए 'नौकरशाही' शब्द का प्रयोग किया जाता है।'[1]

वास्तव में नौकरशाही एक ऐसी शासन प्रणाली है जिसमें शासन सम्बन्धी महत्वपूर्ण कार्य असैनिक अथवा प्रशासकीय अधिकारियों द्वारा किए जाते हैं। इस प्रकार इन सेवाओं को नौकरशाही कहा गया है। भारतीय प्रशासन में नौकरशाही अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। ''यह तकनीकी पक्ष से शिक्षित उन व्यक्तियों की एक पेशेवर श्रेणी है जो व्यक्ति क्रमवार संगठित है और निष्पक्ष रूप में राज्य की सेवा करते हैं।''[2] प्रजातन्त्र में प्रशासक वर्ग का महत्त्व असंदिग्ध है। प्रजातन्त्र में देश का प्रशासन यही वर्ग चलाता है। नेता अथवा सत्ता दल बदलता रहता है किन्तु यह वर्ग स्थायी रहता है। शासक वर्ग शक्तिशाली तो होता है किन्तु अधिकांशतः अयोग्य, जिसे शासन चलाने की नीतियों का क ख ग भी नहीं आता। प्रजातन्त्र में इस वर्ग से अपेक्षा की जाती है कि यह निष्पक्ष होकर कार्य करें। किसी दल का न पक्ष लें न किसी का विरोध। उचित नीतियों से देश का कार्य करें। साथ ही सत्तागढ़ दल का भी यह कर्तव्य है कि अपनी शक्ति का गलत प्रयोग न करें। परन्तु आज स्थिति बिल्कुल विपरीत है।

राजनीति का जाल सम्पूर्ण व्यवस्था पर फैल चुका है। नौकरशाही भी इससे मुक्त नहीं है। आज नौकरशाही पर राजनीति हावी है। अतएव नौकरशाही का राजनीतिकरण हो चुका है। आज देश में नौकरशाही भ्रष्ट हो गई है। उसमें रिश्वत, सिफारिश और परिवारवाद जैसे तत्व समाहित हो चुके हैं। आज नौकरशाही भ्रष्टाचार की पटरी पर दौड़ रही है। आज की राजनीति के इस विकृत पक्ष ने हमारे सामाजिक जीवन को बहुत प्रभावित किया है। समाज में धन के कारण लोग अनैतिक कार्य करते हैं। धन कमाने के लिए लोग भ्रष्टाचार का सहारा लेते हैं। धन हमारे सामाजिक जीवन में बहुत महत्त्व रखता है और आधुनिक युग में तो धन का कुछ अधिक महत्त्व बढ़ गया है। इस अर्थव्यवस्था के कारण ही हमारे समाज में भ्रष्टाचार व्याप्त है। अधिकारी और अधीनस्थ सभी कर्मचारी कार्यालयीय लाल फीताशाही, टरकाऊ नीति और व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति हेतु भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे रहे है।''[3]

अमरकान्त ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से राजनीति में प्रचलित भ्रष्टाचार, अमानवीयता आदि को वाणी दी है। 'ग्रामसेविका' उपन्यास का पात्र प्रधान जी ऐसे ही चरित्र हैं। इसकी विशेषताओं को निरुपित करते हुये अमरकान्त लिखते हैं– ''नाम है विचित्र नारायण दुबे, जिसके अनुरूप गुण भी है।

ठिगना थुलथुल शरीर, लम्बी ना, तरल–सी आँखें और बड़े–बड़े दाँत, जो दोनों होंठों को कभी मिलने नहीं देते। गाँव में उनके पास सबसे अधिक जमीन थी। मकान भी बड़ा और पक्का था। परन्तु वह बहुत ही धर्मात्मा किस्म के व्यक्ति थे। आजादी मिलने के पूर्व चाहे वह प्रभावशाली और अत्याचारी जमींदार के रूप में भले ही विख्यात रहें हों, परन्तु उसके बाद उनमें घोर परिवर्तन हुआ। वह कहते भी थे कि यह जीवन परिवर्तनशील है। उन्होनें खद्दर का कुर्ता, खद्दर की धोती और गांधी टोपी नियमित रूप से पहननी शरू कर दी थी। उनकी आवाज बहुत मीठी हो गई थी और वह सदा मुस्कुराते रहते थे।''[4]

उपर्युक्त उपन्यास में प्रधान जी भ्रष्टाचार की जीती–जागती मिसाल हैं। पूरे गाँव की बागडौर इसके ही हाथ में है। वह गाँव वालों के छोटे–छोटे कार्यों को करवाने के लिए रिश्वत भी लेते और सरकारी मुजाजियों को रिश्वत भी देते थे।

छोटे–छोटे काम के लिए प्रधान जी अफसरों या दफ्तर के बाबुओं से मिलने को तैयार रहते हैं। स्वतन्त्रता दिवस के बाद विकास–कार्य के सिलसिले में कई दफ्तर खुल गए थे। लोग जरूरत होने पर प्रधानजी के पास ही जाते थे। वे जानते थे कि प्रधानजी के अलावा और कोई उनका काम नहीं कर सकता। परन्तु काम कैसे हो ? भैया, जैसा जमाना आए वैसा करना चाहिए! वे शहर के लोग हैं, पैसा तो उतना मिलता नहीं, दो–चार पैसा पान–पत्ता के लिए जरूरी हो जाता है। वैसे तो कोशिश यही की जाती है कि काम मुफ्त ही में हो जाए, परन्तु कुछ कहा भी तो नहीं जा सकता! इस तरह प्रधानजी की जेब हमेशा भरी रहती थी।''[5] प्रधान जी जैसे पात्र आज भी हमारे समाज की व्यवस्था को खोखला कर रहे हैं। आजादी के बाद तो राजनीति को एक पेशे के रूप में लिया जाने लगा। अमरकान्त ने अपने उपन्यासों में प्रशासक वर्ग की इन्हीं कमियों को और सत्तारूढ़ दल के इस वर्ग पर अनुचित प्रभाव को रेखांकित किया है तथा साथ ही आज की नौकरशाही व तज्जन्य भ्रष्टाचार का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। आज उच्च अधिकारी से छोटे लोगों तक जिस भ्रष्टाचार तथा रिश्वतखोरी का बोलबाला है, उसका यथार्थ अंकन उपन्यास में दिखाई देता है। अपने पद का दुरूपयोग करके अधिकारी वर्ग सरकार से धन की तो लूट करते ही हैं, साथ में जनता के किसी भी कार्य को करने के बदले में रिश्वत लेना भी अपना अधिकार समझते हैं।

स्पष्ट है कि सरकारी नीतियाँ सरकारी कर्मचारियों तथा ऊँच पहुँच रखने वाले साहूकारों के लिए ज्यादा लाभप्रद होती है। राजनेता और सरकारी कर्मचारी अपने निजी स्वार्थ को ध्यान में रखकर भी फैसला करते और करवाते हैं। वे जनता को मूर्ख बनाकर अपना स्वार्थ साधने के लिए जनता के बीच के ही आदमी को इस काम के लिए तैनात करते हैं।

प्रधान जी का चरित्र भी ऐसा ही था। लेखक ने इसकी राजनीति सोच के घटियापन को भी वाणी दी है। यह भोली भाली जनता का अपनी तिकड़बाजी चालों से शोषण करता है। इसमें लेखक ने सरकारी तन्त्र में व्याप्त भ्रष्टाचार, शोषण, अन्याय को भी वाणी दी है। लेखक ने इसी राजनीति के दूषित वातावरण को वाणी देते हुए लिखा है– ''गाँव की जनता के वास्तविक प्रतिनिधि थे प्रधानजी क्योंकि वहाँ के अधिकतर लोग यह तो जानते नहीं थे कि विकास योजनाओं से दरअसल क्या फायदे हैं। दो–चार जो जानते भी थे उनको कायदा–कानून ठीक से मालूम नहीं था। वे लोग सरकारी अफसरों और बाबुओं से बचना भी चाहते थे। उन लोगों के दिल में बाबुओं के प्रति गहरा सन्देह था। इसका कारण भी था। दफ्तर के बाबू तथा अफसर जब गाँव में आते तो वे बहुत ही ऊँचाई से बात करते थे। कभी–कभी वे रूखा व्यवहार भी करते। वे गाँव में प्रधानजी या कभी–कभी महादेव सेठ के यहाँ रूकते, जहाँ उनके लिए पूड़ियाँ छानी जाती; दही–दूध का इन्तजाम किया जाता, उनकी जी हुजूरी की जाती। उनको गाँव के अन्य लोगों के यहाँ जाने की जरूरत ही महसूस नहीं होती थी। सारी बातें और सारे आँकड़े उनको इन धनी घरों से मालूम हो जाते थे। इसका परिणाम होता था कि इन्हीं व्यक्तियों के घर के सामने सफाई हो पाती या नाली पक्की कर दी जाती।''[6]

इस तरह अमरकान्त ने स्पष्ट किया है कि सरकारी नीतियों की असफलता का सबसे बड़ा कारण ढ़ोंगी, भ्रष्टाचारी नेता हैं। जो सरकार की विकास योजनाओं को अपनी स्वार्थ सिद्धी का साधन समझता है। इनको साधारण जन की समस्याओं से कोई सरोकार नहीं होता। ये तो हर हालत मे अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं।

'आकाश पक्षी' नामक उपन्यास में अमरकान्त ने भारतीय सामन्त वर्ग की मानसिकता प्रस्तुत करने के साथ–साथ मजदूर–किसान के शोषण को भी चित्रित किया है। यद्यपि आज भारत में जमींदारी प्रथा कानून की नजर में दण्डनीय अपराध घोषित कर दिया गया है। लेकिन इसके अवशेष अब भी हमारे सांमती किस्म के लागों में विद्यमान है। उपर्युक्त तथ्यों को वाणी देते हुये लेखक राजकुमारी नामक पात्रा से कहलवाता है – ''माँ के स्वर में झुँझलाहट होती थी, जैसे ऐसी मामूली–सी बात न समझ में आने के कारण वह नाराज हो। इसके बाद मुझे याद नहीं कि मैं वहीं सिसकती हुई खड़ी रही या वहाँ से चली गयी थी। किसी को जब मैं दुःख में देखती तो मेरी ऐसी हालत होती थी। अपने दुःख

के बारे में भी मैं यही कह सकती हूँ। जब मैं स्वयं बीमार हो जाती तो काफी चीखती–चिल्लाती। बहरहाल हमारी रियासत में बड़ें लोगों द्वारा गरीब लोगों को मारने–पीटने और सताने की घटनाएँ सदा होती रहती थीं। हम लोग तो राज परिवार के थे ही। कुछ अन्य लोगों को छोड़कर शेष जनता भयंकर निर्धनता में जीवन व्यतीत करती थी। दोनों जून रोटी का प्रबन्ध उनके लिए कठिन हो जाता था। उसका कोई नहीं था– न ईश्वर और न खुदा। जो कुछ था, वह राजा ही था।''[7]

इस तरह की घटनाओं को राजा लोग अपनी शान समझते थे – ''इन्जीनियर साहब हँसते रहे। उन्होंने कोई भी जबाव नहीं दिया। बड़े सरकार कहते गए, ''वैसी शान–शौकत अब आ नहीं सकती, जैसी पहले थी। खाने–पीने की क्या कमी थी ? इतना एफरात का होता था कि कुत्ता–बिल्ली खाते थे। लोग खुशहाल थे। प्रजा लोग वफादारी से रियासत की सेवा करते थे, राजा की आज्ञा को ईश्वर की आज्ञा मानते थे और रियासत उनके लिए भोजन और वस्त्र का इन्तजाम भी करती थी। ऊपर से वे दो पैसा बचाते थे। साल में कोई–न–कोई अँग्रेज अफसर आता और खूब लुत्फ करता। दावतें उड़ रही हैं, शिकार पार्टियाँ खाना हो रही हैं, घुड़दौड़ हो रही है, हाथियों का चिंघाड़ सुनाई दे रहा है। यह सब खत्म हो गया। यह भी कोई बात हुई ? यह सब रौनक खत्म करके क्राँग्रेंस ने बड़ा अपराध किया है। देखिए, नीच–ऊँच का भेद जब से इन्सान है तभी से है।''[8]

लेकिन शीघ्र ही देश आजाद हो जाता है तो सामन्ती जीवन जीने वाले और अपने आपको राजा साहब समझने वाले चिंतित हो जाते हैं। इसी वातावरण को आरेखित करते हुये लेखक लिखता हैं– ''माँ के चुप रहने पर भी बड़े सरकार पर कोई असर नहीं हुआ। वह जोर–जोर से बोले, ''ये मिनिस्टर लोग बहुत ही घटिया किस्म के होते हैं। उनको कुछ रूपयों पर खरीदा जा सकता है। मैं सब कुछ देख चुका हूँ अगर मैं चाहूँ तो कुछ रूपयों पर एक मिनिस्टर को खरीद लूँ, लेकिन मैं जान–बूझकर नहीं बोलता। कभी मैं भी राजनीति में खुलकर खेलूँगा। सब–कुछ बड़ा आसान है। नबाव साहब कहते हैं कि जनता तो भेड़–बकरियों के समान है।''[9]

इस तरह नवाबी मानसिकता– रियासत छूटने पर भी उनकी नस–नस घुली हुई थी। बड़े सरकार कहते भी हैं– ''और मान लो कि खजाने की खुदाई से कुछ नहीं मिलता तो यह निश्चित है कि कारोबार में मैं काफी पैसा पीट लूँगा। पैसा आते ही मैं राजनीति में घुस जाऊँगा। अब पुराना जमाना गया। पहले फसऊ–कतवारू भी नेता हो जाते थे, लेकिन अब ऐसा नहीं होने पाएगा। अब तो जिसे पैसे की ताकत है, वही नेता बन सकता है। मैं आनन–फानन में नेता बन जाऊँगा और पार्लियामेन्ट में निकल जाऊँगा। फिर रूपया आ सकता है जब मैं मंत्री या प्रधानमंत्री बन जाऊँ। किस्मत को कौन जानता है ?''[10]

इन विकृतियों के समाधान के लिए प्रत्येक व्यक्ति को जागरूक होना होगा। जबकि हम सभी इसकी जिम्मेदारी सरकार पर छोड़ कर निश्चित हो जाते है। इसी निश्चितता को वाणी देते हुये लेखक 'कटीली राह के फूल, में कामिनी द्वारा कहलवाता है।

कामिनी ने उत्तेजित स्वर में कहा, 'एक तो यही कहना गलत हैं कि सरकारी एजेंसियाँ ये काम कर रही हैं। सरकार यह सब काम कर भी नहीं सकती। फिर सरकार पर निर्भर रहने से कोई तरक्की नहीं हो सकती। सरकार अक्सर मशीन के रूप में कार्य करती है। फिर सरकार हम सभी हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि जो सरकार पदारूढ़ है उसको हम व्यावहारिक और चेतनशील बनाएँ।''[11]

राजनीति में व्याप्त विभिन्न असमताओं, भिन्नताओं को भी अमरकान्त ने वाणी दी है। 'आकाश पक्षी' नामक उपन्यास में लेखक बड़े सरकार के माध्यम से कहलवाता है ?

''अरे कैसे नहीं ? जब मैं मंत्री होऊँगा तो तुम मंत्री की पत्नी कहलाओगी कि नहीं ? जहाँ जाओगी, लाखों–करोड़ों की दृष्टि तुम पर रहेगी, तुम्हारा नाम अखबारों में निकलेगा और तुम्हारी खूब प्रशंसा होगी। लोग तुमसे संस्थाओं का उद्घाटन कराएँगें और तुम बहुत–से समारोहों में पुरस्कार बाँटोगी। सभाओं में तुम भाषण दोगी और लोगों से कहोगी कि वे तरक्की करें। मैं यह सब मजाक नहीं कर रहा हूँ। यह किसी दिन होकर रहेगा। जब हो जाएगा तो कहना।''[12]

देश की आजादी के बाद जिस समानता, स्वतन्त्रता का हमने स्वप्न देखा था, वह स्वप्न जल्द ही धूमिल हो गया। शीघ्र ही अग्रेंजी शासन की तरह हमारी व्यवस्था में भी घूसखोरी, अत्याचार, अन्याय आदि का बोलबाला हो गया। इस तरह लेखक ने अप्रत्यक्ष रूप से तत्कालीन व्यवस्था पर कटाक्ष करने के साथ–साथ सामंती मनोवृत्ति का भी उल्लेख किया है।''

कॉंग्रेसी लोग तो अवश्य ही देश को चौपट कर देंगे। राज का काम बनिया–बैकल थोड़े कर सकते हैं ? कहा भी है कि बनिया का जी धनिया। डरपोक और काहिल कभी शासन का काम कर सकता है ? कांग्रेसी जाति–पाँत को तोड़ना चाहते हैं, लेकिन ऐसा भी कहीं हो सकता है ? जाति–पाँत तो ऋषि–मुनियों का बनाया है, भगवाना रामचन्द्र भी जाति पाँत मानते थे। लोग सम्हलकर रहें, नहीं तो जब हम लोग फिर आएँगे तो एक–एक को जिन्दा भुनवा देंगे। साले मेरी बातों से सिटपिटा गए। मैं

जिसे डाँट दूँ, उसको पाखाना–पेशाब हो जाय। आई–बाई गुम हो जाय। मैं तो रियासत के दिनों में अँग्रेजों को फटकार देता था। वहीं तो मैं अब भी हूँ ? मेरी शक्ति, शान–शौकत, मेरा रोब–दाब खत्म कैसे हुआ है ? सालों ने चलते वक्त रूपए भेंट चढ़ायें।''[13]

कानून और व्यवस्था की संरक्षक मानी जाने वाली संस्था भारतीय पुलिस की छवि भी साफ–सुथरी नहीं रही। यद्यपि इनके कार्यभार और उत्तरदायित्व को देखते हुए इसके प्रति लोगों के मन में श्रद्धा और सहानुभूति होनी चाहिए, किन्तु इसके विपरीत उसे घृणा से देखा जाता है। इसका कारण भी स्पष्ट है कि एक ओर पुलिस जहाँ क्रूरता एवं निर्दयता की प्रतीक है तो दूसरी ओर वह भ्रष्टाचार की पर्याय समझी जाती है।

साहित्यकार युगचेतना कलाकार होता है। उपन्यासकारों ने समाज जन–जीवन को निकटता से परखा है एवं उसका रूप चित्रित करने का सार्थक प्रयास किया। ''हिन्दी उपन्यास साहित्य में पुलिस विभाग के भ्रष्टाचार पर व्यापक चित्रण मिलता है। वर्तमान में पुलिस के अतिरिक्त अन्य विभागों में भी ऐसा भ्रष्टाचार फैला हुआ है।''[14] पुलिस द्वारा सीधे एवं सरल व्यक्तियों को अपराधी घोषित करके जेल भेजा जाता है और जो वास्तविक अपराधी हैं उनके साथ गुलछर्रे उड़ाए जाते हैं। आज पुलिस सामान्य लोगों की सुरक्षा न करके डकैतों, हत्यारों, विघटनकारियों का सहयोग कर रही है। इनकी काली छाया समाज को किस प्रकार पीड़ित कर रही है, इसका तथ्यपरक चित्रण अमरकान्त ने अपनी रचनाओं में किया है। इस विभाग की अकर्मण्यता के कारण अपराध–वृत्ति निरन्तर बढ़ती जा रही है।

'सूखा पत्ता' नामक उपन्यास में लेखक उपर्युक्त तथ्यों को वाणी देते हुये मनोहर द्वारा कहलवाता है। ''लेकिन जेल से निकलने के बाद ही न मालूम कैसी जिद् सवार हो गई। पुलिस और गुलामी के लिए भारी नफरत पैदा हो गई। मैंने बहुत कुछ पढ़ा, देखा मालूम हुआ कि इस देश में इतनी अशिक्षा और गरीबी है कि उसको मिटाने के लिए अपना सब कुछ कुर्बान कर देना चाहिए..... अपना दुःख क्या चींज! मैं राजनीति में पडता गया। कुछ लोग अपने स्वार्थों को सिद्ध करने के लिए राजनीति का सहारा लेते हैं इसलिए उनसे लड़ना जरूरी होता हैं।''[15]

इसी उपन्यास में नायक कृष्ण को पुलिस चोरी के झूठे इल्जाम में पकड़ कर ले जाती है। जबकि वह बार–बार कहता है– ''उसने अपनी बात स्पष्ट की : ''शहर के ही वह कांग्रेसी हैं। बैरिया के थानेदार ने उनको धोखे से गिरफ्तार करके बहुत पीटा है। सिर और मूंछ के बाल उखाड़ लिये हैं। नीच थानेदार ने एक कान्स्टेबल से उनके मुंह में पेशाब भी करवायी। लेकिन वह आदमी बहादुर है। उसने कुछ भी बतलाने से इन्कार कर दिया है।''

यहीं चिनगारी थी। हमने देशभक्तों पर विदेशी सरकार द्वारा किया गये जुल्मों के एक–से–एक किस्से सुने थे, किन्तु इस किस्से ने अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ जैसा क्रोध और घृणा उत्पन्न की, वैसी किसी भी बात ने नहीं। अथवा यों कहा जाये कि चूंकि यह हमारे जिले की हाल ही में घटित घटना थी, इसलिए उसने हमारे क्रोध को क्रियात्मक बिन्दु पर पहुंचा दिया। एक ओर तो मुझे बहुत गुस्सा आया, और दूसरी ओर उक्त कांग्रेसी की बहादुरी और त्याग की बात सोचकर आंखे भर आईं।''[16]

इस तरह अमरकान्त ने पुलिस विभाग की अमानवीयता प्रस्तुत करते हुये जेल में पुलिस द्वारा होने वाले अत्याचारों की भी पोल खोली है। कृष्ण आगे बताता है– ''उसके बोलते ही दोनों सिपाहियों ने मुझे पकड़ा और जबरदस्ती मुर्गा बना दिया। जब मैं छोटा था तो अपने स्कूल में कई बार मुर्गा बन चुका था, इसलिए इस पर मुझे कोई विशेष आपत्ति नहीं थी। किन्तु, मुश्किल से दो मिनट तक इस स्थिति में रहा था कि पीछे से शहर कोतवाल ने एक लात जमायी, जिससे मैं मुंह के बल गिरा। मेरी नाक फूट गयी और खून बहने लगा। मैं खड़ा हुआ तो फिर मुर्गा बनाया गया। जब मैं मुर्गा बनता तो कोतवाल उसी तरह से पीछे से लात मार देता। तीन बार उसने ऐसा किया। मैं गुस्से से अन्धा हो गया, और जब वे चौथी बनाने के लिए आगे बढ़े तो मैं तनकर बोला : ''नहीं बनूंगा मुर्गा मैं।''[17]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि अमरकान्त ने अपने उपन्यासों द्वारा राजनीति के विभिन्न विकृत पक्षों एवं राजनीतिज्ञों की तिकड़मचालों को युगानुरूप वाणी दी है। इसके साथ–साथ लेखक ने सरकारी विकास–योजनाओं में होने वाली धोखाधड़ी को भी वर्णित किया है, जिसमें राजनीति अहम भूमिका निभाई है। ग्रामसेविका का पात्र विचित्र सिंह ऐसा ही राजनेता के रूप में प्रस्तुत हुआ है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. आनन्द शर्मा, उपन्यासकार कमलेश्वर समाजशास्त्रीय निकष पर, पृ० 238
2. सं. एस.एस. नन्दा, एप्लबाई– लोक प्रशासन, पृ० 483
3. डॉ. आनन्द शर्मा, उपन्यासकार कमलेश्वर समाज शास्त्रीय निकष पर, पृ० 229
4. अमरकान्त, ग्रामसेविका, पृ० 60
5. वही, पृ० 59
6. वही, पृ० 59

7. अमरकान्त, आकाश पक्षी, पृ० 9
8. वही, पृ० 65
9. वही, पृ० 136
10. वही, पृ 136
11. अमरकान्त, कटीली राह के फूल, पृ० 48–49
12. अमरकान्त, आकाश पक्षी, पृ० 139
13. वही, पृ० 63
14. डॉ० केशवदेव शर्मा, आधुनिक उपन्यास और वर्ग संघर्ष, पृ० 202
15. अमरकान्त, सूखा पत्ता, पृ० 61
16. वही, पृ० 235
17. वही, पृ० 128